शिक्षा : कुछ महत्वपूर्ण ऐतिहासिक विकास

शिक्षा संबंधी संवैधानिक प्रावधान – किसी भी समाज के अनेक कार्यो, जैसे – जन – कल्याण आर्थिक विकास, संस्कृति का परिरक्षण एवं हस्तांतरण आदि आकांक्षाएं सामाजिक विकास एवं सुरक्षा से जुड़ी होती है। इन लक्ष्यों को पूरा करने के लिए जन समुदायों में शिक्षा बहुत आवश्यक है। हमारे संविधान – निर्माताओं ने समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कुछ प्रावधानों को बनाया है। अनुच्छेद 239 के अनुसार, भारत साकार शिक्षा के लिए अनन्य एवं विधायी प्राधिकार रखती है। शिक्षा संबंधी संवैधानिक प्रावधानों में निम्नलिखित उल्लेखनीय है –

अनुच्छेद 28 के अनुसार शिक्षा–संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा की स्वतंत्रता है।

अनुच्छेद 29 के अनुसार नागरिकों को अनी भाषा, लिपि, संस्कृति की सुरक्षा व समृद्धि एवं शैक्षिक अधिकारों के लिए पूर्ण अवसर प्रदान किया गया है।

अनुच्छेद 30 के अनुसार अल्पसंख्यक वर्गो के हितों की रक्षा का प्रावधान है। राज्य द्वारा संचालित अथवा राज्य द्वारा सहायता प्राप्त शिक्षण संस्थाओं में प्रेवेश प्राप्त करने का सभी को पूर्ण अधिकार है। अल्पसंख्यक वर्गो को अथवा अन्य किसी को उनके धर्म, जाति, भाषा आदि के आधार पर इन शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश से नहीं रोका जा सकेगा। अल्पसंख्यक वर्गो को अपनी शिक्षा संस्थाओं की स्थापना का अधिकार होगा। प्रत्येक अल्पसंख्यक वर्ग को अपनी भाषा लिपि तथा संस्कृति की रक्षा के लिए शिक्षण संस्थाएं खोलने, उनका प्रबंध तथा विकास करने के लिए प्रयत्न करने का अधिकार होगा और सरकार उन्हें आर्थिक सहायता देने में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करेगी।

अनुच्छेद 21 द्वारा शिक्षा के अधिकार को दिसम्बर, 2002 में 86 वे संविधान संशोधन द्वारा शामिल किया गया। इसके अनुसार 6-14 वर्ष के सभी बच्चों को निःशुल्क शिक्षा दी जाएगी।

शिक्षा पर राज्य के नीति–निर्देशक तत्व – अनुच्छेद 41 में राज्य से काम पाने के, शिक्षा पाने, बेकारी, बुढ़ापा, बीमारी और निःशक्तता तथा अन्य सहायता न मिलने पर लोक सहायता अधिकार का प्रावधान है।

अनुच्छेद 45 के अनुसार संविधान में 6-14 वर्ष की आयु के बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान है, परंतु अब इसमें संशोधन के कारण छः वर्ष की कम आयु के सभी बच्चों की देखभाल और शिक्षा की व्यवस्था का प्रावधान है।

अनुच्छेद 45 के अनुसार अनुसूचित जातियों, जनजातियों व अन्य दुर्बल वर्गो की सामाजिक अन्याय और शोषण से सुरक्षा करना हैं इस प्रकार कुछ राज्य के नीति निर्देशक तत्व राज्य से शिक्षा के समान अवसर उपलब्ध कराते हैं।

संविधान के भाग-XI में सातवीं अनुसूची में सूची-I संघ सूची, सूची-II-राज्य सूची

EduBull.com

महत्वपूर्ण नीतियाँ और आयोग

राष्ट्रीय शिक्षा नीति – सन् 1976 से पूर्व शिक्षा पूर्ण रुप से राज्यों का उत्तरदायित्व था। संविधान द्वारा 1976 में किए गए जिस संशोधन से शिक्षा को समवर्ती सूची में डाला गया, उसके दूरगामी परिणाम हुए। आधारभूत, वित्तीय एवं प्रशासनिक उपायों के द्वारा राज्यों एवं केन्द्र सरकार के बीच की गई जिम्मेदारियों को बांटने की आवश्यकता महसूस की गई। जहां एक ओर शिक्षा के क्षेत्र में राज्यों की भूमिका एवं उनके उत्तरदायित्व में कोई बड़ा बदलाव नहीं हुआ, वहीं केन्द्र सरकार ने शिक्षा के राष्ट्रीय एवं एकीकृत को सुदृढ़ करने का गुरुतर भार भी स्वीकार किया। इसके अंतर्गत सभी स्तरों पर शिक्षकों की योग्यता एवं स्तर को बनाए रखने, देश की शैक्षिक जरुरतों का आकलन एवं रखरखाव शामिल है।

केन्द्र सरकार ने अपनी अगुवाई में शैक्षिक नीतियों एवं कार्यक्रम बनाने और उनके क्रियान्वयन पर नजर रखने के कार्य को जारी रखा है। इन नीतियों में सन् 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा–नीति (एनपीई) तथा यह कार्यवाही कार्यक्रम (पीओए) शामिल है, जिसे सन् 1992 में अद्यतन किया गया। संशोधित नीति में एक ऐसी राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली तैयार करने का प्रावधान है जिसके अंतर्गत शिक्षा में एकरुपता लाने, प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम को जनांदोलन बनाने, सभी को शिक्षा सुलभ कराने, बुनियादी (प्राथमिक) शिक्षा की गुणवत्ता बनाए रखने, बालिका शिक्षा का विशेष जोर देने, देश के प्रत्येक जिले में नवोदय विद्यालय जैसे आधुनिक विद्यालयों की स्थापना करने, माध्यमिक शिक्षा को व्यवसायपरक बनाने, उच्च शिक्षा के क्षेत्र में विविध प्रकार की जानकारी देने और अंतर अनुशासनिक अनुसंधान करने, राज्यों में नए मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना करने, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद को सुदृढ़ करने तथा खेलकूद, शारीरिक शिक्षा, योग को बढ़ावा देने एवं एक सक्षम मूल्यांकन प्रक्रिया अपनाने के प्रयास शामिल हैं। इसके अलावा शिक्षा में अधिकाधिक लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु एक विकेन्द्रीकृत प्रबंधन ढांचे का भी सुझाव दिया गया है। इन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में लगी एजेंसियों के लिए विभिन्न नीतिगत मानकों को तैयार करने हेतु एक विस्तृत रणनीति का भी पीओए में प्रावधान किया गया है।

एनपीई द्वारा निर्धारित राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली एक ऐसे राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढांचे पर आधारित है, जिसमें अन्य लचीले एवं क्षेत्र विशेष के लिए तैयार घटकों के साथ ही एक समान पाठ्यक्रम रखने का प्रावधान है। जहां एक ओर शिक्षा नीति लोगों के लिए अधिक अवसर उपलब्ध कराए जाने पर जोर देती है, वहीं वह उच्च एवं तकनीकी शिक्षा की वर्तमान प्रणाली को मजबूत बनाने का आह्वान भी करती है। शिक्षा नीति शिक्षा के क्षेत्र में कुल राष्ट्रीय आय का कम से कम 6 प्रतिशत धन लगाने पर भी जोर देती है।

केन्द्रीय शिक्षा परामर्शदाता बोर्ड (सीएबीई) शिक्षा के क्षेत्र में केन्द्रीय और राज्य सरकारों को परामर्श देने के लिए गठित सर्वोच्च संस्था है। इसका गठन 1920 में किया गया था और 1923 में व्यय में कमी लाने के लिए इसे भंग कर दिया गया। 1935 में इसे पुनः गठित किया गया और यह बोर्ड 1994 तक अस्तित्व में रहा। इस तथ्य के बावजूद कि विगत में सीएबीई के परामर्श पर महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए हैं और शैक्षिक एवं सांस्कृतिक विषयों पर व्यापक विचार–विमर्श एवं परीक्षण हेतु इसने एक मंच उपलब्ध कराया है।

मार्च, 1994 में बोर्ड के बढ़े हुए कार्यकाल की समाप्ति के बाद इसका पुनर्गठन नहीं किया गया। राष्ट्रीय नीति 1986 (जैसा कि 1992 में संशोधित किया गया) में यह प्रावधान है कि शैक्षिक विकास की समीक्षा करने तथा व्यवस्था एवं कार्यक्रमों पर नजर रखने के लिए आवश्यक परिवर्तनों को निर्धारण करने में भी सीएबीई की महत्वपूर्ण भूमिका होगी। यह मानव संसाधन विकास के विभिन्न क्षेत्रों में आपसी तालमेल एवं परस्पर संपर्क सुनिश्चित करने के लिए तैयार की गई उपयुक्त प्रणाली के माध्यम से अपना कार्य करेगा। तदनुसार ही सरकार ने जुलाई, 2004 में सीएबीई का पुनर्गठन किया और पुनर्गठित सीएबीई की पहली बैठक 10 एवं 11 अगस्त, 2004 को आयोजित की गई। विभिन्न विषयों के विद्वानों के अलावा लोकसभा एवं राज्यसभा के सदस्यगण, केंद्र राज्य एवं केन्द्रशासित प्रदेशों के प्रशासनों के प्रतिनिधि इस बोर्ड के सदस्य होते हैं।

पुनर्गठित सीएबीई की 10 एवं 11 अगस्त, 2004 को हुई बैठक में कुछ ऐसे संवेदनशील मुद्दों पर विशेष विचार – विमर्श करने की आवश्यकता महसूस की गई। तदनुसार निम्नलिखित विषयों के लिए सीएबीई की सात समितियां बनाई गई –

1. निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा विधेयक तथा प्राथमिक शिक्षा से जुड़े अन्य मामले।
2. बालिका शिक्षा तथा एक समान स्कूल प्रणाली।
3. एक समान माध्यमिक शिक्षा।
4. उच्च शिक्षा संस्थानों को स्वायत्तता।
5. स्कूल पाठ्यक्रम में सांस्कृतिक शिक्षा का एकीकरण।
6. सरकार – संचालित प्रणाली के बाहर चल रहे स्कूलों के लिए पाठ्यपुस्तकों एवं समानांतर पाठ्य पुस्तकों के लिए नियामक व्यवस्था।
7. उच्च एवं तकनीकी शिक्षा को वित्तीय सहायता देना।

शिक्षा के क्षेत्र से जुड़ी विभिन्न परियोजनाओं और कार्यक्रमों के क्रियान्वयन हेतु भारत एवं विदेशों से प्राप्त होने वाली छोटी से छोटी सहायता (दान) राशि की सुगमता से प्राप्ति के लिए सरकार ने समिति पंजीयन अधिनियम, 1860 के अंतर्गत एक पंजीकृत सोसायटी के तौर पर 'भारत सहायता कोष' का गठन किया है। 9 जनवरी, 2003 को 'प्रवासी भारतीय दिवस' के अवसर पर आयोजित समारोह में विधिवत प्रारंभ किया गया। यह कोष शिक्षा के क्षेत्र में संबंधित सभी गतिविधियों एवं क्रियाकलापों के लिए निजी संगठनों, व्यक्तियों, कार्पोरेट (उद्योग) जगत, केन्द्र एवं राज्य सरकारों, प्रवासी भारतीयों एवं भारतीय मूल के लोगों में दान/अंशदान तथा सहायता राशि प्राप्त कर सकेगा।

समिति एवं आयोग

(1) राधाकृष्णन आयोग – विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग की स्थापना सन 1948 में डॉ. एस. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में की गई थी। इस आयोग की स्थापना का उद्देश्य विद्यालय स्तर पर शिक्षा के संबंध में सुझाव देना था।

- आयोग का यह मानना था कि एक विद्यालय का मूल उद्देश्य छात्रों को आम विषयों पर शिक्षा प्रदान करना होना चाहिए।
- विद्यालयों में उपुयक्त कक्षा–कक्ष होने चाहिए। प्रशिक्षित अध्यापक होने चाहिए तथा पाठशालाओं का वातावरण अनुशासित होना चाहिए तथा उनमें पुस्तकीय शिक्षा के साथ–साथ छात्रों को शारीरिक शिक्षा भी दी जानी चाहिए।
- आयोग ने यह भी सुझाव दिया कि स्कूली शिक्षा का समय 12 वर्ष होना चाहिए तथा उसके पश्चात् उनकी योग्यता के आधार पर ही उन्हें विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार होगा।
- आयोग के अनुसार स्तर पर ऐसे विषय पढ़ाए जाने चाहिए जो सामान्य विज्ञान, भौतिक तथा जैविकीय वातावरण से संबंधित हो तथा ऐसे विषयों में शामिल किया जाना चाहिए, जो छात्रों में जीवन मूल्यों का संचार करें।
- आयोग द्वारा एक अन्य महत्वपूर्ण सुझाव यह भी दिया गया कि चूंकि स्कूली शिक्षा के पश्चात् बहुत कम विद्यार्थी उच्च शिक्षा प्राप्त करते हैं अतः विद्यालय स्तर पर ऐसे व्यावसायिक विषयों को शामिल किया जाना चाहिए ताकि विद्यार्थी किसी रोजगार को अपनाने में सफल हो सकें तथा आत्मनिर्भर नागरिक बनें।

(2) मुदालियार आयोग – मुदालियार आयोग की स्थापना सन् 1952 में की गई थी। इस कमेटी की प्रमुख सिफारिशें निम्नलिखित थी –

I. आयोग ने 11 वर्ष की स्कूली शिक्षा का प्रावधान किया जिसमें प्राथमिक शिक्षा 7-8 वर्ष तक, उच्चतम माध्यमिक शिक्षा वर्ष तक, ताकि पूरी विद्यालयी शिक्षा 11 वर्ष के अंतराल में पूरी हो जाए।

II. पाठ्यक्रम में यह निर्देश दिया गया कि उच्च माध्यमिक स्तर तक सभी अनिवार्य विषयों को पढ़ाया जाए तथा उच्चतम माध्यमिक स्तर पर ऐच्छिक/वैकल्पिक पाठ्यक्रम को लागू किया जाए। प्रमुख कोर विषय होंगे – भाषा सामाजिक विज्ञान, सामान्य विज्ञान, गणित, संगीत तथा कला, क्राफ्ट तथा भौतिक शिक्षा पर वैकल्पिक विषय होंगे –
(क) मानविकी (ख) विज्ञान (ग) तकनीकी विषय (घ) अनिवार्य विषय
(ड) कृषि संबंधी विषय (च) गृह विज्ञान

III. स्कूलों को बहुउद्देशीय शिक्षा प्रणाली तथा तकनीक अपनाने के लिए कहा गया, ताकि भविष्य में छात्र विभिन्न विषय–क्षेत्रों को अपना सकें।

IV. वार्षिक परीक्षा इस प्रकार की होनी चाहिए, जिससे कि छात्रों की शैक्षिक विकास की गति को जाना जा सके।

V. आयोग ने यह भी सिफारिश की कि विद्यालयों में अध्यापकों के वेतन–भत्ते को इतना आकर्षक बना दिया जाए कि लोग अधिक संख्या में अध्यापक बनने के लिए प्रेरित हों। किन्तु उच्च शिक्षा प्राप्त अध्यापकों की ही नियुक्ति ही जानी चाहिए।

VI. अध्यापकों के प्रशिक्षण के तरीके में भी सुधार किए जाने चाहिए। प्राथमिक तथा उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों को प्रशिक्षण संस्थाओं को विश्वविद्यालयों में ही अध्यापन का प्रशिक्षण दिया जा सके।

VII. स्कूलों के कामकाज की देखरेख के लिए स्कूल शिक्षा बोर्ड की व्यवस्था भी की जानी चाहिए।

मुदालियार आयोग की सिफारिशें निम्नलिखित क्षेत्रों से संबंधित है –

(1) व्यावसायिक कुशलता में सुधार
(2) नेतृत्व का विकास
(3) प्रजातंत्रीय नागरिकता का विकास
1. देशभक्ति की भावना
2. स्पष्ट चिन्तन
3. समुदाय की भावना
4. बोलने तथा लिखने में स्पष्टता
5. वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना का विकास
6. विश्व नागरिकता की भावना का विकास
7. व्यक्तित्व का विकास

कोठारी आयोग/शिक्षा आयोग (1964-66) – शिक्षा आयोग का गठन (1964-1966) प्रो. डी. एस. कोठारी के नेतृत्व में किया गया था, जो एक प्रसिद्ध शिक्षाविद् थे। इस आयोग में राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर के शिक्षाविद् शामिल थे।

इस कमीशन ने भारतीय शिक्षा व्यवस्था के तीन प्रमुख कार्यो को प्रकाशित किया –

1. देश तथा राष्ट्र की उम्मीदों पर खरा उतरने के लिए शिक्षा के आंतरिक स्वरुप को परिवर्तित करना आवश्यक है।
2. शिक्षा में एक उत्तम स्तर को प्राप्त करने के लिए प्रणाली में गुणात्मक परिवर्तन करने की आवश्यकता पर बल दिया गया।
3. शिक्षा की सुविधाओं का प्रयास किया जाए अर्थात् व्यवस्था में मात्रात्मक परिवर्तन लाए जाएं। अधिकतम पाठशालाओं की स्थापना की जाए तथा योग्य अध्यापकों की नियुक्ति की जाए।

- कमीशन का यह मत था कि भारत जैसे विकासशील समाज में जनसंख्या विस्फोट, गरीबी, निम्न आर्थिक विकास, बेरोजगारी, सामाजिक असमानता इत्यादि समस्याओं का निदान केवल शिक्षा के प्रसार के द्वारा ही किया जा सकता है।
- शिक्षा के माध्यम से जनमानस की चेतना को जागृत किया जाए, ताकि प्रत्येक नागरिक का आर्थिक स्तर सुधरे तथा साथ ही राष्ट्र का विकास हो।
- अतः कमीशन का यह मत था कि सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा व्यवस्था के प्रत्येक पहलू में परिवर्तन लाना आवश्यक है।

1. शिक्षा के भौतिक कारकों अर्थात् दर में परिवर्तन लाना।
2. शिक्षा में संबंधित मानव संसाधनों को विकसित करना।

- कमीशन का मानना था कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली में आधारभूत परिवर्तन करके ही समाज में साक्षरता अभियान को सफल बनाया जा सकता है।

आयोग का मत था कि शिक्षा के स्तर में सुधार चार महत्वपूर्ण कारकों पर निर्भर करता है, जो निम्नलिखित है –

1. शिक्षा के पिरामिड के ढांचे को विभिन्न स्तरों में विभाजित करना तथा इसमें आपसी संबंधों को स्थापित करना।
2. विभिन्न अवस्थाओं को प्रदान किया गया समय।
3. शिक्षा के आवश्यक तथा आधारभूत कारकों, जैसे अध्यापक, पाठ्यक्रम, अध्यापक की तकनीक इत्यादि में गुणात्मक परिवर्तन।
4. मौजूद सुविधाएँ तथा संसाधनों का पूर्णरुपेण प्रयोग।

कमीशन के अनुसार शिक्षा के स्तर में सुधार इन सभी कारकों की अंतःक्रिया का ही परिणाम है।

- शिक्षा के स्तर में विकास इस पर निर्भर करता है कि उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम प्रयोग किया गया है या नहीं।
- कमीशन ने शिक्षा की 10 + 2 + 3 प्रणाली की सिफारिश की। देश के अधिकतम भागों में शिक्षा की यही प्रणाली प्रचलित है। इस प्रणाली के अनुसार,

1. 1-3 वर्ष पाठशाला से पूर्व शिक्षा के हैं।
2. सामान्य शिक्षा के 10 वर्ष है, जिनमें से 7-8 वर्ष का भाग प्राथमिक स्तर का होगा (जिसमें निम्न प्राथमिक स्तर 4-5 वर्ष का तथा उच्च प्राथमिक स्तर 3-2 वर्ष का होगा) तथा निम्न स्तर पर माध्यमिक शिक्षा 3 या 2 वर्ष की होगी अथवा इसमें 1-3 वर्ष तक व्यावसायिक शिक्षा भी प्राप्त कर सकते हैं।

- उच्चतम शिक्षा जो कि 1-2 वर्ष की अथवा 3 वर्ष तक की हो सकती है।
- 3 वर्ष की डिग्री स्तर की अर्थात् स्नातक स्तर की शिक्षा तथा उसके पश्चात 2 वर्ष की स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा अथवा शोध सबंधी कार्य इत्यादि।

सन् 1968 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति पारित की गई।

1. शिक्षा के ढांचे के संबंध में इसमें सिफारिश की गई कि देश के सभी भागों में शिक्षा की एक समान प्रणाली को अपनाया जाए। 10 + 2 + 3 की शिक्षा प्रणाली को लागू किया जाए, जिसमें + 2 की कक्षाएं स्कूल में भी चलाई जा सकती हैं अथवा कॉलेजों में भी इसे लागू किया जा सकता है।
   किन्तु इसमें यह भी कहा गया कि राज्यों को यह स्वतंत्रता है कि वे अपनी इच्छानुसार तथा सामर्थ्यनुसार इस प्रणाली को अपनाएं।
2. इसके अनुच्छेद 6 में यह भी कहा गया कि चूंकि नई शिक्षा व्यवस्था लागू करना एक कठिन कार्य है अतः जहां आवश्यकता होगी केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार को अनुदान राशि अवश्य देगी।
3. शिक्षा के गुणात्मक स्तर, के संबंध में आयोग ने घोषणा की कि चूंकि शिक्षा को तथा शिक्षा के स्तर को प्रभावित करने वाला तथा बच्चों को शिक्षित करने वाला एक सशक्त माध्यम अध्यापक है। अध्यापक के चरित्र, उसके व्यक्तित्व तथा गुणत्व पर ही शिक्षा का स्तर निर्भर

करता है। अतः केवल योग्यतम व्यक्तियों को ही अध्यापक के पद पर नियुक्त करना चाहिए तथा अध्यापकों को समाज में उपयुक्त सम्मान दिया जाना चाहिए।

कमीशन ने उच्च माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा आरम्भ करने का सुझाव दिया। कमीशन का मत था कि आरम्भ में कई प्रकार के विषयों का अध्यापन शुरु किया जा सकता है जैसे कि प्राथमिक स्तर पर अध्यापक प्रशिक्षण, व्यापारिक प्रशिक्षण, कृषि तथा उद्योग में मैनेजर तथा सेक्रेटेरियल स्तर के विषय, नर्सिंग लैब टैक्नीशियन, गृह विज्ञान इत्यादि।

कमीशन द्वारा दिए प्रमुख सुझाव निम्नलिखित है –

1. उच्चतर माध्यमिक शिक्षा का काल 2 वर्ष का होना चाहिए तथा इसकी शिक्षा की व्यवस्था विद्यालयों में ही की जानी चाहिए।
2. इन व्यावसायिक शिक्षण विषयों के अध्यापन का लक्ष्य अगले बीच वर्षो में प्राप्त कर लिया जाना चाहिए।
3. अगले इस वर्षो में विश्वविद्यालयों में पढ़ाए जाने वाले व्यावसायिक विषयों को कॉलेजों से विद्यालयों में स्थानान्तरित किया जाना चाहिए।
4. उसके पश्चात् इन विषयों के अध्यापन को अधिक मजबूत करने के लिए आवश्यक उपकरणों की सुविधा प्रदान की जानी चाहिए तथा इस दिशा में अधिकतम अध्यापकों को प्रशिक्षित किया जाना आवश्यक है।
5. पांचवीं पंचवर्षीय योजना के काल तक लगभग सभी स्कूलों में इन विषयों के अध्यापन का लक्ष्य प्राप्त कर लिया जाना चाहिए।
6. उच्च माध्यमिक स्तर पर विभिन्न प्रकार के उन विषयों का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए, जिनकी व्यावसायिक महत्ता हो।
7. कमीशन ने इन छात्रों के लिए अंशकालीन व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र आयोजित करने का सुझाव दिया, जिन्होंने किसी कारणवश अपने पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी तथा जो काम करने के साथ–साथ शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं।
8. कमीशन ने राज्यों में व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए केन्द्रीय सरकार को निर्देश दिए कि वह राज्य सरकारों को आर्थिक सहायता प्रदान करे।

त्रिभाषा सूत्र – भारत में संविधान के अंतर्गत हिंदी को राजभाषा का दर्जा प्राप्त है तथा अंग्रेजी को सहभाषा का भारत विभिन्न भाषा समूह का देश है अतः संपर्क भाषा के रुप में अंग्रेजी का प्रयोग किया जाता है। शिक्षा के माध्यमों में त्रिभाषा सूत्र का विशेष महत्व है। त्रिभाषा सूत्र के अंतर्गत हिन्दी–अंग्रेजी तथा क्षेत्रीय भाषा में शिक्षा के माध्यमों की उपलब्धता पर विशेष चर्चा की गई और शिक्षा में हिन्दी–अंग्रेजी एवं क्षेत्रीय भाषा को महत्व दिया गया।

1. महत्वपूर्ण सिद्धांतों पर त्रिभाषा सूत्र स्थापित है – हिन्दी संघ की राष्ट्रीय भाषा है अतः संघ के अंतर्गत मातृभाषा का विकास किया जाए।
2. अंग्रेजी का ज्ञान सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि यह किन छात्रों हेतु है।
3. हिन्दी अथवा अंग्रेजी में अधिगम की व्यवस्था।
4. तीन भाषाओं में शिक्षा सभी राज्यों में अनिवार्य करना।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा (एन.सी.एफ) – 2005

(एन.सी.ई.आर.टी) राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद की कार्यकारिणी ने 14 एवं 19 जुलाई, 2004 की बैठकों में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या को संशोधित करने का निर्णय लिया। यह निर्णय माननीय मानव संसाधन विकास मंत्री द्वारा लोकसभा में दिए गए इस वक्तव्य के अनुसरण में लिया गया कि परिषद को यह संशोधन करना चाहिए। इसी क्रम में मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा सचिव ने परिषद के निदेशक को एक पत्र लिखा। पत्र में उन्होंने 1993 की 'शिक्षा बिना बोझ के' रपट की रोशनी में विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा (एन.सी.एफ.एस.ई.) – 2000 की समीक्षा करने की आवश्यकता व्यक्त की। इन्हीं निर्णयों के संदर्भ में प्रोफेसर यशपाल की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय संचालन समिति और इक्कीस राष्ट्रीय फोकस समूहों का गठन किया गया। इन समितियों में उच्च शिक्षा संस्थानों के प्रतिनिधि, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद के अकादमिक सदस्य, स्कूलों के शिक्षक और गैर–सरकारी संगठनों के प्रतिनिधि सदस्यों के रुप में शामिल हुए। देश के हर हिस्से में इस मुद्दे पर विचार–विमर्श एवं चिंतन किया गया। इसके साथ ही मैसूर, अजमेर, भुवनेश्वर, भोपाल और शिलांग में स्थित परिषद के क्षेत्रीय शिक्षा संस्थानों में भी क्षेत्रीय संगोष्ठियों का आयोजन किया गया। राज्यों के सचिवों, राज्यों की शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषदों और परीक्षा बोर्ड के सदस्यों से विचार–विमर्श किया गया। ग्रामीण शिक्षकों से सुझाव लेने के लिए एक राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया गया। राष्ट्रीय और क्षेत्रीय समाचारपत्रों में विज्ञापन दिए गए जिससे लोग नयी पाठ्यचर्या के बारे में अपनी राय दे सकें और बड़ी तादाद में लोगों की प्रतिक्रियाएँ आई। संशोधित राष्ट्रीय पाठ्यचर्या दस्तावेज का आरंभ रवीन्द्रनाथ टैगोर के निबंध "सभ्यता और प्रगति" के एक उद्धरण से होता है जिसमें कविगुरु हमें याद दिलाते हैं कि सृजनात्मकता और उदार आनंद बचपन की कुंजी है और नासमझ वयस्क संसार द्वारा उनकी विकृति का खतरा है। आरंभिक अध्याय में स्वतंत्रता के बाद किए गए पाठ्यचर्या में सुधार के प्रयासों की चर्चा की गई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपी. ई), 1986 में यह प्रस्तावित किया गया था कि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या को शिक्षा की राष्ट्रीय व्यवस्था विकसित करने का एक साधन होना चाहिए जो भारतीय संविधान में राष्ट्रीय निर्माण के 'दर्शन' को अपनी आधार भूमि माने। कार्ययोजना (पी.ओ.ए.), 1992 ने प्रासंगिकता, लचीलेपन और गुणवत्ता के तत्वों पर जोर देते हुए इसके दायरे को थोड़ा और विस्तृत किया। सामाजिक न्याय और समानता के संवैधानिक मूल्यों पर निर्धारित एक धर्मनिरपेक्ष, समतामूलक और बहुलतावादी समाज के आदर्श से प्रेरणा लेते हुए इस दस्तावेज में शिक्षा के कुछ व्यापक उद्देश्य चिन्हित किए गए हैं। इनमें शामिल हैं विचार और कर्म की स्वतंत्रता, दूसरों की भलाई और भावनाओं के प्रति संवेदनशीलता, नयी स्थितियों का लचीलेपन और रचनात्मक तरीके से सामना करना, लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भागीदारी की प्रवृत्ति और आर्थिक प्रक्रियाओं तथा सामाजिक बदलाव में योगदान देने के लिए काम करने की क्षमता। अगर शिक्षा को जीने के लोकतांत्रिक तरीकों को सुदृढ़ करना है तो उसे स्कूल में जाने वाली पहली पीढ़ी की उपस्थिति का भी ध्यान रखना ही होगा जिसका स्कूल में बने रहना उस संविधान संशोधन के चलते अनिवार्य हो गया है जिसने आरंभिक शिक्षा को हर बच्चे का मौलिक अधिकार बना दिया है। संविधान के इस संशोधन से हम पर यह जिम्मेदारी आ गई है कि हम सारे बच्चों को जाति, धर्म संबंधी अंतर, लिंग और असमर्थता संबंधी चुनौतियों से निरपेक्ष रहते हुए स्वास्थ्य, पोषण और समावेशी स्कूली माहौल मुहैया कराएं जो उनको शिक्षा ग्रहण में मदद पहुंचाएं तथा उन्हें सशक्त बनाएं। हमारे शैक्षिक उद्देश्यों और शिक्षा की गुणवत्ता में आज गहरी विकृति आ गई है, इसका प्रमाण है यह तथ्य कि शिक्षा बच्चों और उनके मां–बाप के लिए तनाव और बोझ का कारण बन गई है। इस विकृति को दुरुस्त करने के लिए पाठ्यचर्या के इस दस्तावेज ने पाठ्यचर्या निर्माण के पांच निर्देशक सिद्धांतों का प्रस्ताव रखा है : (1) ज्ञान को स्कूल के बाहर के जीवन से जोड़ना; (2) पढ़ाई रटंत प्रणाली से मुक्त हो यह सुनिश्चित करना; (3) पाठ्यचर्या का इस तरह संवर्धन कि वह बच्चों को चहुंमुखी विकास के अवसर मुहैया करवाए जाए जिससे कि पाठ्यपुस्तक–केंद्रित बन कर रह जाए; (4) परीक्षा को अपेक्षाकृत अधिक लचीला बनाना और कक्षा की गतिविधियों से जोड़ना; और (5) एक ऐसी अधिभावी पहचान का विकास जिसमें प्रजातांत्रिक राज्य–व्यवस्था के अंतर्गत राष्ट्रीय चिंताएं समाहित हों। आरंभिक कक्षाओं के दौरान हमारे सारे शैक्षणिक प्रयास इस बात पर बहुत निर्भर करते हैं कि पूर्व प्राथमिक शिक्षा (ई.सी.ई.) की योजना पेशेवर दक्षता के साथ बनाई जाए और उसका सार्थक विस्तार किया जाए। दरअसल आरंभिक स्कूली पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों में कोई भी सुधार पूर्व प्राथमिक शिक्षा (ई.सी.ई.) के बहुपरिचित सिद्धांतों की रोशनी में ही किया जाना चाहिए। अध्याय 2 में ज्ञान की प्रकृति और बच्चों की सीखने की कार्यनीतियों पर चर्चा की गई है जो अध्याय 3 में दिए गए उन सुझावों का सैद्धांतिक आधार निरुपित करती है जो पाठ्यचर्या के विभिन्न क्षेत्रों के लिए दिए गए हैं। यह तथ्य कि बच्चा ज्ञान का सृजन करता है, इसका निहितार्थ है कि पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकें शिक्षक को इस बात के लिए सक्षम बनाएं कि वे बच्चों की प्रकृति और वातावरण के अनुरुप कक्षायी अनुभव आयोजित करें, ताकि सारे बच्चों को अवसर मिल पाएं। शिक्षण का उद्देश्य बच्चे के सीखने की सहज इच्छा और युक्तियों को समृद्ध करना होना चाहिए। ज्ञान को सूचना से अलग करने की जरुरत है और शिक्षा को एक पेशेवर गतिविधि के रुप में पहचानने की जरुरत है न कि तथ्यों के रटने

और प्रसार के प्रशिक्षण के रुप में। सक्रिय गतिविधि के जरिए ही बच्चा अपने आसपास की दुनिया को समझने की कोशिश करता है। इसलिए प्रत्येक साधन का उपयोग इस तरह किया जाना चाहिए कि बच्चों को खुद को अभिव्यक्त करने में, वस्तुओं का इस्तेमाल करने में, अपने प्राकृतिक और सामाजिक परिवेश की खोजबीन करने में और स्वस्थ रुप से विकसित होने में मदद मिले। अगर बच्चों के कक्षा के अनुभवों को इस तरह आयोजित करना हो जिससे उन्हें ज्ञान सृजित करने का अवसर मिले तो हमारी स्कूली व्यवस्था में व्यापक व्यवस्थागत सुधारों की जरुरत होगी (पांचवां अध्याय) और इसकी भी कि स्कूल के विषयों और पाठ्यचर्या के क्षेत्रों की फिर से संकल्पना की जाए (तीसरा अध्याय) और स्कूल के लोकाचार की गुणवत्ता को सुधारने के लिए संसाधन जुटाए जाएं (चौथा अध्याय)। स्कूली पाठ्यचर्या के चार सुपरिचित क्षेत्रों – भाषा, गणित, विज्ञान और समाज विज्ञान में – महत्वपर्ण परिवर्तनों का सुझाव दिया गया है। इस दृष्टि से कि शिक्षा आज की और भविष्य की जरुरतों के लिए ज्यादा प्रासंगिक बन सके और बच्चों को उस दबाव से मुक्त किया जा सके जो वे आज झेल रहे हैं। यह राष्ट्रीय पाठ्यचर्या दस्तावेज इस बात की सिफारिश करता है कि विषयों के बीच की दीवारें नीची कर दी जाएं ताकि बच्चों को ज्ञान का समग्र आनंद मिल सके और किसी चीज को समझने से मिलने वाली खुशी हासिल हो सके। इसके साथ यह भी सुझाया गया है कि पाठ्यपुस्तक और दूसरी सामग्री की बहुलता हो, जिनमें स्थानीय ज्ञान और पारंपरिक कौशल शामिल हो सकते हैं और बच्चों के घर और सामुदायिक परिवेश से जीवंत संबंध बनाने वाले स्फूर्तिदायक स्कूली माहौल को सुनिश्चित किया जा सके। भाषा में त्रिभाषा फार्मूले को लागू करने के फिर से प्रयास का सुझाव दिया गया है जिसमें आदिवासी भाषाओं सहित बच्चों की मातृभाषाओं को शिक्षा के माध्यम के रुप में स्वीकृति देने पर जोर है। प्रत्येक बच्चे में बहुभाषिक प्रवीणता विकसित करने के लिए भारतीय समाज के बहुभाषिक चरित्र को एक संसाधन के रुप में देखना चाहिए जिसमें अंग्रेजी में प्रवीणता भी शामिल है। यह तभी मुमकिन है जब भाषा का पुख्ता शिक्षाशास्त्र मातृभाषा के उपयोग पर आधारित हो। पढ़ना, लिखना, बोलना और सुनना ये क्रियाएं पाठ्यचर्या के सभी क्षेत्रों में बच्चों की प्रगति में भूमिका निभाती हैं और इन्हें पाठ्यचर्या की योजना का आधार होना चाहिए। आरंभिक कक्षाओं के पूरे दौर में पढ़ने पर जोर देना जरुरी है जिससे हर बच्चे को स्कूली शिक्षा का ठोस आधार मिल सके। गणित की शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिससे बच्चों के वे संसाधन समृद्ध हों जो चिंतन और तर्क में, अमूर्तनों की संकल्पना करने और उनका व्यवहार करने में, समस्याओं को सूत्रबद्ध करने और सुलझाने में उनकी सहायता करें। उद्देश्यों का यह व्यापक फलक उस प्रासंगिक और अर्थपूर्ण गणित को पढ़ाकर तय किया जा सकता है जो बच्चों के अनुभवों में गुंथी हुई हो। गणित में सफलता को हर बच्चे के अधिकार की तरह देखा जाना चाहिए। इसके लिए गणित के दायरे को और विस्तृत करने की जरुरत है और इसे दूसरे विषयों से जोड़ने की जरुरत है। हर स्कूल को कंप्यूटर, हार्डवेयर, सॉफ्टवेयर और कनैक्टिविटी मुहैया कराने जैसी ढांचागत चुनौतियों का सामना करने की जरुरत है। विज्ञान के शिक्षण में इस तरह की तब्दीली की जानी चाहिए कि यह हर बच्चे को अपने रोज के अनुभवों को जांचने और उनका विश्लेषण करने में सक्षम बनाए। परिवेश संबंधी सरोकारों और चिंताओं पर हर विषय में जोर दिए जाने की जरुरत है और यह ढेरों गतिविधियों और बाहरी दुनिया पर की गई परियोजनाओं के द्वारा होना चाहिए। इस प्रकार की परियोजना के माध्यम से निकलने वाली सूचनाओं और समझ के आधार पर भारतीय पर्यावरण को लेकर एक सर्वसुलभ और पारदर्शी आंकड़ा–संग्रह तैयार हो सकता है जो अत्यन्त उपयोगी शैक्षणिक संसाधन साबित होगा। यदि विद्यार्थियों की परियोजनाएं सुनियोजित हों तो उनसे ज्ञान सृजित होगा। बाल विज्ञान कांग्रेस की तर्ज पर एक सामाजिक आंदोलन की कल्पना की जा सकती है जिससे पूरे देश में अन्वेषण की शिक्षा को प्रोत्साहन मिलेगा जो बाद में पूरे दक्षिण एशिया में फैल सकता है। सामाजिक विज्ञान में पाठ्यचर्या के इस दस्तावेज द्वारा प्रस्तावित उपागम ज्ञान के क्षेत्रों की विशिष्ट सीमाओं को पहचानता है और साथ ही 'पानी' जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों के लिए समाकलन पर जोर देता है। हाशिए पा ढकेल दिए गए समूहों की दृष्टि से समाज विज्ञान के अध्ययन का प्रस्ताव करते हुए नजरिए में एक पूरी तब्दीली की सिफारिश कर गई है। सामाजिक विज्ञान के सारे पहलुओं में जेंडर के संदर्भ में न्याय और अनुसूचित जाति तथा जनजाति के मसलों को लेकर जागरुकता तथा अल्पसंख्यक संवेदनशीलता के प्रति सजगता होनी चाहिए। नागरिक शास्त्र को राजनीति विज्ञान के रुप में ढालना चाहिए और बच्चों के अतीत और नागरिक अस्मिता की अवधारणा पर इतिहास के प्रभाव के महत्व को पहचानना चाहिए। पाठ्यचर्या का यह दस्तावेज चार पाठ्यचर्यी क्षेत्रों की तरफ ध्यान आकर्षित करता है जो इस प्रकार है : काम, कला और पारंपरिक दस्तकारियाँ, स्वास्थ्य तथा शारीरिक शिक्षा एवं शांति। काम के संदर्भ में आरंभिक स्तर से शुरु करते हुए काम को अधिगम से जोड़ने के लिए कुछ बुनियादी कदम सुझाए गए हैं। उनके पीछे आधार यह है कि ज्ञान काम को अनुभव में रुपांतरित कर देता है और सहयोग सृजनात्मकता और आत्म–निर्भरता जैसे मूल्यों की उत्पत्ति करता है। यह ज्ञान और रचनात्मकता के नए रुपों की प्रेरणा भी देता है। वरिष्ठ कक्षाओं में स्कूल के बाहर के संसाधनों को औपचारिक मान्यता देने की सिफारिश है ताकि उन बच्चों को लाभ पहुंच सके जो आजीविका से सीधे जुड़ी हुई शिक्षा का चुनाव करते हैं। स्कूल के बाहर की आजीविका संस्थाओं को औपचारिक मान्यता की जरुरत है जिससे वे बच्चों को ऐसा स्थान उपलब्ध करवाएं जहां बच्चे औजारों और दूसरे साधनों से काम करें। दस्तकारियों के मानचित्रीकरण की सिफारिश की गई है जिससे उन इलाकों की पहचान की जा सके जहां बच्चों को स्थानीय कारीगरों के सहारे दस्तकारियों में प्रशिक्षण दिया जा सकता है। हर स्तर पर विषय के रुप में कला को जगह दिए जाने की सिफारिश की गई है जिसमें गायन, नृत्य, दृष्य कलाएं और नाटक चारों पहलू शामिल हैं। पर यहां भी जोर परस्पर–क्रियात्मक पद्धतियों पर होना चाहिए न कि प्रशिक्षण पर। क्योंकि कला शिक्षण का उद्देश्य सौंदर्यात्मक और वैयक्तिक चेतना को प्रोत्साहित करना है और विविध रुपों में खुद को व्यक्त करने की क्षमता का बढ़ावा देना है। भारतीय पारंपरिक दस्तकारियाँ आर्थिक और सौंदर्यपरक मूल्यों के अर्थ में स्कूली शिक्षा के लिए प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है यह तथ्य पहचाना जाना चाहिए। स्कूलों में बच्चे की कामयाबी उसके पोषण और सुनियोजित शारीरिक गतिविधि के कार्यक्रमों पर निर्भर होती है। इसीलिए जरुरी संसाधनों और स्कूल के समय को मध्याह्न भोजन कार्यक्रम को सुदृढ़ बनाने में लगाना चाहिए। यह सुनिश्चित करने के लिए विशेष प्रयासों की जरुरत होगी कि स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रमों में शाला पूर्व अवस्था से लेकर आगे तक लड़कों की तरह ही लड़कियों की ओर भी उतना ही ध्यान दिया जाए। पूरी दुनिया में बढ़ती अहिष्णुता और मतभेदों को सुलझाने के तरीके के रुप में हिंसा की ओर बढ़ते रुझान को देखते हुए इस बात की सिफारिश की गई है कि शांति को राष्ट्रीय निर्माण की पूर्व शर्त और एक सामाजिक संस्कार के रुप में समग्र मूल्य संरचना के तौर पर स्वीकार किया जाए जिसकी आज अत्यधिक प्रासंगिकता है। एक लोकतंत्रिक और न्यायपूर्ण संस्कृति में बच्चों के समाजीकरण के लिए शांति के लिए शिक्षा की संभावनाओं को विभिन्न गतिविधियों के द्वारा हर स्तर पर, और हर विषय में विषयों के विवेकपूर्ण चुनाव के जरिए साकार किया जा सकता है। शांति के लिए शिक्षा को शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यचर्या में शामिल करने की सिफारिश की गई है। स्कूल के माहौल को पाठ्यचर्या के एक पहलू की तरह देखा गया है क्योंकि यह बच्चों को शिक्षा के उद्देश्यों और सीखने की उन युक्तियों के लिए तैयार करती है जो स्कूल में सफलता के लिए जरुरी है। एक संसाधन के रुप में स्कूल के समय को लचीले ढंग से नियोजित किए जाने की जरुरत है। स्थानीय स्तर पर नियोजित लचीले स्कूली कैलेण्डर और समय सारणी की सिफारिश की गई है ताकि परियोजना और प्राकृतिक और पारंपरिक धरोहर वाले स्थलों के लिए भ्रमण जैसी विविध प्रकार की गतिविधियों के लिए मौका मिल सके। इस बात की कोशिश करनी होगी कि बच्चों के लिए सीखने के अधिक संसाधन तैयार किए जाएं, खासकर स्कूल और शिक्षक के लिए संदर्भ पुस्तकालय हेतु स्थानीय भाषाओं में किताबें और संदर्भ सामग्रियाँ उपलब्ध हों और बच्चों की अंतःक्रियात्मक तकनीक तक पहुंच हो न कि प्रसारित तकनीक तक। यह दस्तावेज माध्यमिक स्तर पर विकल्पों में बहुलता और लचीलेपन के महत्व पर जोर देता है और बच्चों को बंद खांचों में डाल देने की स्थापित प्रवृत्ति को हतोत्साहित करता है क्योंकि इससे बच्चों के, खास कर ग्रामीण इलाकों के बच्चों के अवसर सीमित हो जाते हैं व्यवस्थागत सुधारों के संदर्भ में यह दस्तावेज पंचायती राज व्यवस्था को सुदृढ़ करने पर बल देता है। गुणवत्ता और जवाबदेही बढ़ाने के माध्यम के रुप में सामुदायिक भागीदारी को प्रोत्साहित करने के लिए एक अधिक सुनियोजित रुख अपनाकर यह किया जा सकता है। पर्यावरण से जुड़ी विविध स्कूल–आधारित परियोजनाएं पंचायती राज संस्थाओं के लिए एक ऐसा ज्ञान भण्डार हो सकती है जिसके आधार पर वे स्थानीय पर्यावरण की बेहतर साज–संभाल कर उसे पुनर्जीवित कर सकते हैं गुणवत्ता के स्तर को ऊपर उठाने के लिए स्कूली स्तर पर अकादमिक नियोजन और नेतृत्व जरुरी है और खण्ड एवं स्कूल स्तर पर भूमिकाओं में विभाजन करना बहुत ही आवश्यक है। चट्टोपाध्याय कमीशन (1984) द्वारा सुझाए गए पेशेवर मानकों में ढीलापन लाने की हाल की प्रवृत्ति को रोकने के लिए शिक्षक–प्रशिक्षण में क्रांतिकारी परिवर्तन की जरुरत है। सेवापूर्व प्रशिक्षण कार्यक्रमों को ज्यादा

लंबी अवधि का तथा अधिक समग्रता लिए हुए होना चाहिए ताकि बच्चों का ध्यानपूर्वक अवलोकन करने के लिए पर्याप्त अवसर और स्कूलों में इंटर्नशिप के द्वारा शिक्षा शास्त्रीय सिद्धांतों को व्यवहार से जोड़ने के पूरे मौके मिल सकें। पाठ्यचर्या को नवीकृत करने के लिए सबसे जरुरी व्यवस्थागत कदम होगा परीक्षाओं में सुधार जिससे खासकर दसवीं और बारहवीं कक्षा में बच्चों और उनके माता–पिता पर बढ़ते मनोवैज्ञानिक दबाव की गहराती समस्याओं का कोई समाधान निकाला जा सके। इसके लिए जो विशेष कदम उठाने जरुरी हैं वे हैं प्रश्न पत्र के स्वरुप का पूरा परिवर्तन, जिससे तर्कशक्ति और रचनात्मक क्षमताओं को आकलन का आधार बनाया जाए न कि रटने की क्षमता को। साथ ही पारदर्शिता और आंतरिक आकलन को बढ़ावा देते हुए परीक्षाओं को कक्षा की गतिविधियों से भी जोड़ने की जरुरत है। आज प्रचलित पास और फेल की सामान्यीकृत श्रेणियों की कमी को दूर करने के लिए जरुरी होगा कि ऐसी युक्तियाँ खोजी जाएं जो बच्चों को अलग–अलग स्तर की उपलब्धियों का विकल्प लेने को प्रेरित कर सकें। बोर्ड–पूर्व परीक्षाओं पर अतिरिक्त जोर को भी हतोत्साहित किए जाने की जरुरत है। अन्ततः यह दस्तावेज स्कूली व्यवस्था और दूसरे नागरिक समूहों के बीच सहभागिता की सिफारिश करता है जिनमें गैर–सरकारी संगठन और शिक्षक संगठन भी शामिल हैं। पहले से ही मौजूद नवाचारों के अनुभवों को मुख्य धारा का स्वरुप देने की जरुरत है। आज जरुरत इस बात की है कि आरंभिक शिक्षा के सर्वव्यापीकरण में निहित चुनौतियों के प्रति सजगता को राज्य और बच्चों को लेकर काम कर रही सारी एजेंसियों के बीच एक व्यापक सहभागिता का विषय बनाया जाए और पहले से मौजूद नवाचारों के अनुभवों को मुख्यधारा में लाया जाए।

EduBull.com